उमर ख़ैयाम की रुबाइयाँ

रघुवंशलाल गुप्त
आई० सी० एस०

किताबिस्तान

उमर ख़ैयाम और उनकी रुबाइयाँ*

ख़ैयाम का जीवन

हकीम गयासुद्दीन अबुलफतह उमर बिन इब्राहीम ख़ैयाम का जन्म ईसा की ग्यारहवी शताब्दी मे खुरासान देश के प्रधान नगर नैशापुर मे हुआ था। इनके जीवन-वृत्तान्त के विषय मे प्राच्य और पाश्चात्य विद्वानो ने बहुत कुछ छान-बीन की है परन्तु निश्चयात्मक रूप से अधिक नही कहा जा सकता।

---

*नोट—जो पाठक उमर ख़ैयाम के जीवन-वृत्त के विषय में विशेष छान-बीन करने को उत्सुक हो उनसे हमारा अनुरोध है कि वे मौलाना सुलेमान नदवी के "ख़ैयाम" (उर्दू: दारुलमुसन्नफीन, आजमगढ़) को अवश्य पढ़ें। इस विषय पर जो कुछ अब तक लिखा गया है उस सब का उल्लेख इस पुस्तक में है और सभी मुख्य विद्वानो के मत का तर्क-पूर्ण विवेचन किया गया है। मौलाना साहब ने अनेक परिश्रम और खोज के बाद यह पुस्तक लिखी है और ख़ैयाम के जीवन-सम्बन्धी कई नई बातें निकाली है। इनका उल्लेख हमने भी अपने लेख में यथास्थान किया है। परन्तु विस्तार-भय से हम मौलाना साहब की दलीलो का ब्यौरा नहीं दे सके।

उमर ख़ैयाम की "बीजगणित" को छोड कर, उनके

उमर ख़ैयाम की रुबाइयाँ

मौलाना सुलेमान नदवी के "खैयाम" के प्रकाशन होने के पहिले प्राय सभी विद्वान खैयाम का मृत्यु-सवत् सन् ११२३ ई० मानते थे, और क्योकि खैयाम के दीर्घायु होने मे कोई सदेह नही, यह अनुमान किया जाता था कि इनका जन्म सन् १०२३ ई० और १०४६ ई० के बीच हुआ होगा। मौलाना साहब ने यह नतीजा निकाला है कि उमर खैयाम की मृत्यु सन् ११३२ ई० के लगभग और उनका जन्म सन् १०४८ ई० के लगभग हुआ। अपने मत के समर्थन मे आपने अनेक पुष्ट प्रमाण दिये है और हम आपके मत को अधिक न्याय-सगत समझते है।

कहते है कि उमर ख़ैयाम का खान्दानी पेशा "खेमा" या तम्बू बनाना था और ये स्वय तम्बू सीकर अपनी गुज़र किया करते थे। एक रुबाई मे आपने फरमाया है—

जो ख़ैयाम सिया करता था "हिकमत" के ख़ेमे अनमोल
गिरा वही दुख की भट्ठी में, अनायास हा ! गया फफोल।
काल-कतरनी ने दी उसकी, अल्प आयु की डोरी काट
"किस्मत" के दलाल ने उसको बेच दिया मिट्टी के मोल।*

अन्य सभी प्राप्य ग्रन्थों का पूर्ण संग्रह भी इस पुस्तक में छपा है। रुबाइयो का संग्रह देसना (जिला पटना) वाली पाण्डुलिपि के आधार पर है।

* خیّام که خیمه‌های حکمت می دوخت
در کورهٔ غم فتاد و ناگاه بسوخت

यो तो कितने ही फारसी कवियो ने अपना उपनाम अपने पेशे पर रख छोडा था—"अत्तार" इत्र और दवाये बेचा करता था, "हमगर" कपडे रफू किया करता था; इत्यादि। परन्तु, कुछ विद्वानो का मत है कि उमर "खैयाम" का सम्बन्ध केवल ज्ञान के खेमो तक ही परिमित था। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सुल्तान मलिकशाह की छत्र-छाया मे रह कर खैयाम को अपने भरण-पोषण के लिए साधारण तम्बू नही सीने पडे होगे। सम्भव है इनके पूर्वज कभी यह काम करते रहे हो, जिससे उनके वशज "खैयाम" कहलाने लगे हो। अपनी बीजगणित की पुस्तक मे उमर ने स्वय अपने को "अल्खैयामी" बताया है। इससे अनुमान किया जाता है कि "खैयाम" केवल इनका कौटुम्बिक उपनाम था।

इनके अध्ययन-काल के विषय मे एक अद्भुत कथा प्रसिद्ध है। कहते है कि उमर खैयाम, निज़ामुल्मुल्क और हसन इब्न सब्बाह तीनो इमाम मुवफ्फक नैशापुरी के शिष्य थे और साथ साथ पढते थे। इमाम साहब ऐसे विद्वान और गुणी थे कि जन-साधारण मे यह बात प्रसिद्ध थी कि जो लडका इमाम साहब से शिक्षा पाता है वह एक दिन अवश्य

مقراض اجل طناب عمرش ببرید
دلّالِ امل برایگانش بفروخت

धन और मान का अधिकारी होता है। इसी लिए धनी और उच्चाकाक्षी मनुष्य दूर दूर से अपने पुत्रो को इनके यहाँ पढने भेजते थे। अस्तु।

एक दिन ये तीनो एक जगह इकट्ठे हुए तो हसन इब्न सब्बाह ने कहा कि लोगो का विश्वास है कि इमाम साहब के शिष्य ऐश्वर्य और मान प्राप्त करते है, तो हम मे से तीनो नही तो कम से कम एक तो अवश्य किसी उच्च-पद पर पहुँचेगा। हम लोगो को यह प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हम मे से जो कोई धन-सम्पन्न बन जाये वह शेष दोनो को अपना हिस्सेदार बना ले। उमर खैयाम और निजामुल्मुल्क न यह बात मान ली और वचन दे दिया। निजामुल्मुल्क सुल्तान अल्प अरसलान सिलजोकी (१०६२–१०७२ ई०) और उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र मलिकशाह सिल्जोकी के वज़ीर हुए। उमर ख़ैयाम ने विज्ञान और साहित्य के साम्राज्य पर अधिकार किया। कहते है कि निजामुल्मुल्क की कृपा से इनको जागीर मिली और सुल्तान मलिकशाह ने इनके लिए एक यन्त्रघर बनवा दिया जहाँ पर कई वर्ष तक ये अपनी वैज्ञानिक समस्याये सुलझाते रहे। निजा-मुल्मुल्क की बदौलत इब्न सब्बाह को भी राजदरबार में उच्च स्थान मिला, परन्तु अपनी चालाकी और विश्वासघात के कारण उसको वहाँ से भागना पडा। अन्त मे यह इस्मा-इलियों के गिरोह मे जा मिला और उनका सरदार बन

बैठा। "बदनाम अगर होगे तो क्या नाम न होगा"। नाम इसने भी कमाया, किन्तु अत्याचार और अनाचार के नाते। यह अपने अनुयायियो को भग (हशिश) पिला पिला कर मस्त कर देता था और जब उनको भले-बुरे की कुछ सुध न रहती थी, तब भाँति भाँति के प्रलोभन दे कर धर्म के नाम पर उनसे नर-हत्या कराता था। मलिकशाह की मृत्यु के बाद इन इस्माइलियो ने बहुत जोर पकडा। हजारो निर्दोष मनुष्य इनके हाथो मारे गये। स्वय निज़ामुल्मुल्क इन्ही के खजर के शिकार हुए। योरोप मे ये लोग असैसिन्स (assassins) कहलाते थे और इनके पैशाचिक कर्मों का प्रमाण यह है कि आज कल असैसिन (assassin) हत्यारे को कहते है।

यदि यह कथा सत्य होती तो ससार के इतिहास मे अपने ढग की अद्वितीय ठहरती, क्योकि इमाम मुवफ्फक के तीनो शिष्य अपने अपने हल्के मे खूब सरनाम हुए। तीनो का नाम इतिहास-पृष्ठ पर अमिट लेख मे लिखा है। परन्तु ई० जी० ब्राउन, सर डेनीसन रॉस प्रभृति विद्वानो का कथन है कि यद्यपि निजामुल्मुल्क, उमर खैयाम और इब्नसब्बाह तीनो लगभग एक ही समय मे हुए थे, इनका सहपाठी होना असम्भव है। निजामुल्मुल्क का जन्म सन् १०१७–१८ ई० मे हुआ था। इब्नसब्बाह और उमर खैयाम की मृत्यु ११२३–२४ ई० के लगभग हुई। यदि

ये तीनो सम-वयस्क थे तो मृत्यु के समय उमर खैयाम और इब्नसब्बाह की अवस्था सौ वर्ष से अधिक रही होगी; जो कि असम्भव-सा प्रतीत होता है। यदि उमर खैयाम का जन्म और मरण का काल मौलाना सुलेमान नदवी के मतानुसार क्रमश १०४८ ई० और ११३२ ई० माना जाय, तब तो इन तीनो का सहपाठी होना नितान्त असम्भव है।

आजकल उमर खैयाम केवल अपनी रुबाइयो के कारण ही प्रसिद्ध है, किन्तु सत्य बात यह है कि ये गणित, ज्योतिष, धर्मशास्त्र, दर्शन, वैद्यक, तर्कशास्त्र, विज्ञान इत्यादि के प्रकाण्ड पण्डित थे। यूनानी दर्शनशास्त्र का इन्होने विशेष अध्ययन किया था और अपने काल के सर्वश्रेष्ठ गणितज्ञ और ज्योतिषी माने जाते थे। १०७३ ई० मे सुल्तान मलिकशाह की आज्ञानुसार उस समय के आठ सर्वश्रेष्ठ गणितज्ञो ने मिलकर फारसी पञ्चाङ्ग का सुधार किया था। उमर खैयाम उनमे से एक थे। आप की बीजगणित की एक पुस्तक अभी तक मिलती है। दार्शनिक विषयो पर अरबी और फारसी मे लिखे हुए लेख मिस्र देश मे छप चुके है। नदवी साहब के "खैयाम" मे भी ये समाविष्ट है। कहने का तात्पर्य यह है, कि उमर खैयाम ने विज्ञान और विशेषत गणितशास्त्र का प्रेमपूर्वक अध्ययन किया था और इन्ही के कारण अपने काल और देश मे कीर्ति

कमाई थी। जिन्होने केवल इनकी रुबाइयो का नाम सुना है उनको यह जान कर आश्चर्य होगा कि फारसी के पुराने इतिहास "चहार मकाला" मे इनका उल्लेख कवियो के अध्याय मे नही, ज्योतिषज्ञो के अध्याय मे हुआ है। जिन ईरानी इतिहासकारो ने कवियो के जीवनचरित लिखे है उनमे से कुछ ने तो खैयाम का नाम भी नही लिया, जिन्होने इनके विषय मे कुछ कहा भी है उन्होने इनकी वैज्ञानिक क्षमता का ही आदरपूर्वक उल्लेख किया है।

"चहार मकाला", (चार वार्त्ताएँ), जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है, १२वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे अर्थात् उमर खैयाम की मृत्यु के थोडे ही दिन बाद लिखी गई थी और इसका लेखक निजामी अरूजी समरकन्दी उमर खैयाम से स्वय परिचित था। इस पुस्तक मे खैयाम के विषय मे निम्नलिखित दो घटनाओ का वर्णन है। निजामी अरूजी लिखता है—

"सन् ५०६ हिजरी (१११२–१३ ई०) की बात है कि ख्वाजा इमाम उमर खैयाम बलख मे अमीर अबुसैद के मकान पर ठहरे हुए थे। मै भी उनकी खिद-मत मे हाजिर हुआ। मजलिसे इशरत गरम थी कि हुज्ज-तुल्हक हकीम उमर खैयाम ने फरमाया कि मेरी कब्र एक ऐसे मुकाम पर होगी कि जहाँ हर साल दो दफा दरख्त मेरी कब्र पर फूल बरसाया करेगे। मुझे यह बात मुहाल मालूम

हुई, लेकिन मै यह जानता था कि ऐसा शख्स बेहूदा बात नही कह सकता। फिर जब मै सन् ५३० हिजरी मे नैशापुर गया तो इससे कई साल पहिले हकीम साहब फौत हो चुके थे । चूँकि मुझ पर उनका उस्तादी का हक था इस-लिए जुम रात को मै उनकी कब्र की जियारत करने गया। । मैने वहाँ जा कर देखा कि बाग की दीवार के नीचे आप की कब्र है और अमरूद और जरदालू के दरख्तो की शाखे बाग से निकल कर आप की कब्र तक पहुँच गई है। इन दरख्तो के शिगूफे झड झड कर आप की कब्र पर इस कदर जमा हो गये थे कि कब्र नजर न आती थी। इस पर मुझे वह पेशीनगोई याद आई जो आपने बलख मे की थी। आँखो से बे-अख्तियार आँसू निकल पडे, क्योकि मैने बसीते आलम और इकतारे रबये मस्कून मे उसका सानी नही देखा। खुदा बन्द तआला उनको अपने आगोश रहमत मे जगह दे।"

(उल्था 'कासुल्कराम' से)

यह कब्र अभी तक मौजूद है।

दूसरी घटना का वर्णन इस प्रकार है—

"सन् ५०८ हिजरी मे जाडे के दिनो मे बादशाह ने ख्वाजा सदरुद्दीन मुहम्मद बिन अलमुजफ्फर के पास शहर मर्व मे एक आदमी भेजा कि इमाम उमर खैयाम को कहो कि हम शिकार को जाना चाहते है, कोई दिन ऐसे

मुकर्रर करे कि जिनमे बारिश और बर्फ न हो। इन दिनो मे हकीम साहब ख्वाजा सदरुद्दीन के पास ही ठहरे हुए थे। ख्वाजा साहब ने हकीम साहब से पैगाम शाही का जिक्र किया। हकीम साहब ने दो रोज तक इस मामले पर गौर करके दिन मुकर्रर कर दिया और ख़ुद जा कर बादशाह को तवारीख़ मुऐयन (निश्चित दिन) से मुत्तलअ किया। चुनाच बादशाह शिकार को रवाना हुआ। अभी थोडी ही दूर गया था कि बादल उठे और बर्फ गिरनी शुरू हुई। लोगो ने इसपर हकीम साहब की हँसी उडाई। बादशाह ने चाहा कि वापस हो जायँ लेकिन हकीम साहब ने कहा कि 'ख़ातिर जमा रखो अभी बादल हट जायेगे और पाँच दिनो तक जमीन नम भी न होगी।' बादशाह शिकार को रवाना हुआ, बादल हट गये, पाँच दिन तक एक कतरा पानी का भी आस्मान से न गिरा और लोगो ने बादल की शक्ल तक न देखी।"

(उल्था 'कासुल्कराम' से)

निजामी अरूजी ने एक और स्थान पर लिखा है कि उमर खैयाम स्वय फलित ज्योतिष मे विश्वास नही करते थे।

मौलाना सुलेमान नदवी का मत है कि ख़ैयाम ने अपनी

बीजगणित की पुस्तक युवावस्था मे ही लिखी। इस समय खैयाम तुर्किस्तान मे इमाम अबुताहिर सारी समरकदी के आश्रय मे थे। यही से इनकी विद्वत्ता और प्रतिभा की प्रसिद्धि हुई। इमाम साहब ने ही इनको शम्सुल्मुल्क खाकान बुखारा तक, जो खैयाम को अपने साथ राज-सिहासन पर बिठाता था, पहुँचाया। मलिकशाह सिल्जोकी की चहेती बीबी इसी शम्सुल्मुल्क के वश की थी। इससे अनुमान किया जाता है कि जब मलिकशाह ने पञ्चाङ्ग-सुधार के लिए विद्वानो को एकत्र किया तो खैयाम को राजदरबार तक पहुँचने मे कठिनाई न हुई होगी।

मलिकशाह के दरबार मे खैयाम ने बडी इज्जत पाई। यह राजवैद्य और ज्योतिषी होने के अतिरिक्त बादशाह के नदीमो (हरीफे शराब या पास बैठने वाले बुजुर्ग) मे से थे। यही पर रह कर इन्होने पञ्चाङ्ग-सुधार किया और १०९२ ई० तक बादशाह के बनवाये हुए यन्त्रघर मे काम करते रहे। सन् १०९२ ई० मे मलिकशाह की मृत्यु हुई। देश मे क्रान्ति और विप्लव फैल गये; विद्वानो और पण्डितो का आदर कम हो चला; और उमर खैयाम का जीवन भी "अज्ञात" के परदे मे जा छिपा।

इतिहासकारो ने ऐसी बहुत सी घटनाओ का वर्णन किया है जिनसे ख़ैयाम की अद्वितीय प्रतिभा का प्रमाण मिलता

है। स्थानाभाव के कारण यहाँ उन सब का उल्लेख नही किया जा सकता। कहते है कि इनकी स्मरण-शक्ति इतनी तेज थी कि एक पुस्तक को सात बार इस्फहान मे पढा और नैशापुर लौट कर उसको शब्दश लिख दिया। मिलान करने पर केवल दो चार शब्दो का हेर फेर पाया गया। यह हज भी कर आये थे। हज से लौट कर थोडे दिन बग-दाद मे रहे किन्तु वहाँ किसी से मिलते जुलते न थे। तदनन्तर बलख गये और अन्त मे नैशापुर लौट आये जहाँ इनकी मृत्यु हुई। इनकी मृत्यु के विषय मे इनके समकालीन लेखक बेहकी (इमाम अबुबकर अहमद बिन हुसैन बिन अली) ने इनके दामाद मुहम्मद बगदादी से सुनकर लिखा है कि यह इब्न सीना* की "शिफा" नाम की पुस्तक पढ रहे थे, जब "वहदत" और "कसरत" (एकत्व और अनेकत्व) के अध्याय पर पहुँचे तो इन्होने पुस्तक उठा कर रख दी। वसीयत की। नमाज पढी। उस वक्त से फिर न कुछ खाया,

---

*अबु अली इब्न सीना Avicenna (९८०-१०३७ ई०) अपने समय का अद्वितीय विद्वान् था। इसके विचार और ख़ैयाम के विचारो में बहुत समानता है। ओटो राथ-फेल्ड (Otto Rothfeld) और नदवी ख़ैयाम को इब्न सीना का अनुयायी मानते है। "शिफा" उसकी सब से महत्त्व-पूर्ण पुस्तक है।

न पिया। रात को नमाज पढते पढते यह कह कर प्राण त्याग दिये—

"हे ईश्वर! मैने तुझे पहचानने का यथाशक्ति प्रयत्न किया। तू मुझे क्षमा कर, क्योकि तेरे विषय मे जैसा कुछ भी ज्ञान (मारफत) मुझको है, तुझ तक पहुँचने का मेरा वही एक मात्र साधन है।"

रुबाइयाँ

जिन रुबाइयो के पीछे उमर खैयाम का नाम आजकल ससार भर मे फैला है, उनके विषय मे भी निर्णयपूर्वक कुछ नही कहा जा सकता। उमर के जीवन-काल मे इन रुबाइयो को किसी ने सग्रहीत नही किया। सबसे पुराना सग्रह मुहम्मद बिन बद्रे जाजरमी का है। यह सन् १३४० ई० अर्थात् ख़ैयाम की मृत्यु के लगभग २१० वर्ष बाद का है। इसमे केवल १३ रुबाइयाँ है। बोडलियन लायब्रेरी ऑक्सफर्ड की पाण्डुलिपि सन् १४६० ई० की है। इसमे १५८ छन्द है। इसके अतिरिक्त लगभग २० और सग्रह पाये जाते है। कुछ मुद्रित हो चुके है, शेष हस्तलिखित है। निम्न-लिखित तालिका से पता चलेगा कि भिन्न भिन्न सग्रहो मे कितना अन्तर है—

	सग्रह का पता	छन्दो की सख्या
१	ब्रिटिश म्यूजियम-लण्डन, पाँच सग्रह	क्रमश ४६०, २६६, ५४५, ४००, ४२३
२	पैरिस मे छ सग्रह	क्रमश २१३, ३४६, ७६, ८, २५८, ३१
३	इण्डिया आफिस लाइब्रेरी, लन्दन, दो सग्रह	क्रमश ५१२, ३६२
४.	बङ्गाल एशियाटिक सोसाइटी	५१६
५	बाँकीपुर (पटना) खुदाबख्श ओरियन्टल लाइब्रेरी	६१३
६	देसना (ज़िला पटना), नदवी के "खैयाम" मे प्रकाशित	२०५
७.	फ्रेडरिक रोजन द्वारा प्रकाशित (१६२५ ई०; कावियानी प्रेस, बर्लिन)	३२६
८	अमृतसर मे मुद्रित	६२४
६.	टेहरान मे मुद्रित	एक हज़ार से अधिक

जो सग्रह जितना नया है उसमे उतनी ही अधिक रुबाइयॉ सग्रहीत है। जो रुबाइयॉ उमर खैयाम के नाम से प्रकाशित हो चुकी है यदि उन सब को एकत्र किया जाय तो दो-तीन हजार तक नम्बर पहुँच जाय। परन्तु वास्तव मे ख़ैयाम की बनाई हुई रुबाइयॉ ३००–४०० से अधिक न होगी।

अच्छी कविता मात्र जन-साधारण मे प्रचलित हो जाती है परन्तु लोकपरम्परा कविता को याद रखती है, कवि को भूल जाती है। और, सौ दो सौ वर्ष पीछे यदि कोई मनुष्य इन लोकप्रिय कविताओ का सग्रह करता है तो भिन्न भिन्न कवियो की कविताओ का पृथक्करण असम्भव हो जाता है—विशेषत यदि रुबाई की भॉति कविता का छन्द ऐसा लोकप्रिय हो कि छोटे बडे सहस्रो कवियो ने उसी छन्द मे एक ही विषय पर कविता की हो। कभी कभी निम्न-श्रेणी के लेखक अपनी रचनाओ का गौरव बढाने की इच्छा से जानबूझ कर उनको लोकमान्य कवियो की रचना में घुसेड देते है। कबीर, विद्यापति, सूरदास इत्यादि की रचनाओ के विषय मे हिन्दी-साहित्य-ससार का अनुभव भी बहुत कुछ ऐसा ही है। उमर ख़ैयाम भी लोक और काल के इस अत्याचार से नही बचे। इनकी रुबाइयो मे विशेष समिश्रण इस लिए भी हुआ है कि १३वी शताब्दी से ही इनकी रुबाइयो के गूढार्थ के विषय मे मतभेद चला आता

है। "सूफी" और "रिन्द" दोनो ही ने इनको अपनाया है। अपने अपने पक्षपात के अनुसार दोनो ही ने इनकी "मदिरा" का रसास्वादन किया है और अपने अपने मत के समर्थन की इच्छा से मनमानी रुबाइयाँ ख़ैयाम की असली रुबाइयो मे जोड दी है। ऐसी अवस्था मे यह कहना कि कितनी रुबाइयाँ वास्तव मे ख़ैयाम ने लिखी नितान्त असम्भव है। इसी सम्बन्ध मे फ्रेडरिक रोजन* लिखते है—

"लगभग एक हज़ार रुबाइयो की यत्नपूर्वक जाँच करने के बाद मै इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि २३ रुबाइयो को छोड कर अन्य रुबाइयाँ उमर खैयाम की ही है, यह बात प्रमाण-पूर्वक नही कही जा सकती। तथापि इसमे सन्देह नही कि शेष रुबाइयो मे से बहुत सी वास्तव मे ख़ैयाम ही की बनाई हुई है।"

जब कि यह कहना असम्भव है कि वास्तव मे ख़ैयाम ने कौन कौन सी रुबाइयाँ लिखी, तब इन रुबाइयो के आधार

---

* डाक्टर फ़्रेडरिक रोजन (Frederich Rosen) जिनका उल्लेख पहिले भी किया गया है जर्मनी के प्रसिद्ध फारसी के विद्वान हैं। उपरोक्त अवतरण उनकी "The Quatrains of 'Omar Khayyām (Methuen & Co. London), 1930, की भूमिका में से लिया गया है।

पर उनके मत और सिद्धान्तो का निरूपण करना अन्याय होगा। इसके अतिरिक्त ध्यान देने योग्य बात यह है कि "रुबाई" मुक्तक काव्य का एक रूप है। इसमे क्रमबद्ध भाव-विकास और प्रबन्धात्मक विचार-योजना के लिए स्थान नही। किसी भी भाव को चुभती हुई भाषा मे कह देना, यही रुबाई का उद्देश्य है। इसमे भाषा की प्रगति और शब्द-चातुर्य मुख्य ठहरते है और भाव-गौरव गौण। ऐसा अनुमान किया जाता है कि उमर ख़ैयाम ने अपनी रुबाइयाॅ मित्रो के सम्मेलनो मे विशेष कर मनोरञ्जनार्थ कही होगी। तो फिर ऐसी रुबाइयो मे से दो एक रुबाई छाॅट कर उनके आधार पर कवि को "आस्तिक" या "नास्तिक" कह देना उचित नही।

तथापि उमर ख़ैयाम के धार्मिक सिद्धान्तो के विषय मे विद्वानो मे बराबर मतभेद चला आता है। एक ओर लोग कहते है कि खैयाम मुसल्मानी धर्माचार मे विश्वास न करते थे। जिस शराब का छूना तक वर्जित है, वे उसी के सच्चे उपासक थे और उनकी रुबाइयाॅ "ऋण कृत्वा घृत पिबेत्" वाले आधिभौतिक सुखवाद के सिद्धान्त का उपदेश देती है। दूसरी ओर लोगो की राय है कि ये पहुँचे हुए "सूफी" थे और हाफिज़ आदि अन्य फारसी कवियो की भाॅति इनकी 'मदिरा' ईश्वर-प्रेम का उपनाम मात्र है।

जैसा कि हम ऊपर सिद्ध कर चुके है यह एक ऐसा विवादात्मक विषय है कि जिसमे लकीर खीच कर कह देना कि अमुक मत ठीक है और अमुक मत बे-ठीक नितान्त असम्भव है। खैयाम की दार्शनिक और आध्यात्मिक रचनाओ का विशेष अध्ययन करके मौलाना सुलेमान नदवी ने यह नतीजा निकाला है कि यह महाशय "सूफी"* थे, अबुअली इब्न सीना के अनुयायी थे। यूनानी दर्शनशास्त्र का अध्ययन कर चुके थे और उसमे श्रद्धा रखते थे। इसलिए, यद्यपि इनके विचारो में कट्टर धर्माचार का पक्षपात नही पाया जाता, ये सदाचारी और धर्म-भीरु मुसलमान थे। ऑटो राथफैल्ड (Otto Rothfeld) ने भी अपनी Umar Khayyam and his Age (उमर ख़ैयाम और उनका काल) नामक पुस्तक में खैयाम को इब्न सीना का अनुयायी माना है। परन्तु राथफैल्ड ख़ैयाम को इब्न सीना की भाँति "मदिरा" और "मदिराक्षी" का पुजारी समझता है। हम उमर ख़ैयाम को कोरा "पियक्कड" या नास्तिक मानने के लिए तैयार नही। हमारे विचार मे खैयाम सदाचारी थे। ईश्वर की सत्ता मे उनका अनन्य विश्वास था। यदि बेहकी का कथन सत्य है तो इनकी श्रद्धा का प्रमाण इनके अन्तिम शब्दो मे ही

---

*"सूफी" का साधारण अर्थ है "सदाचारी"।

प्रत्यक्ष है। हाँ, लोक-दिखावा और पाखण्ड को धर्म नही समझते थे। खैयाम शराब पीते थे या नही, यह एक छोटी सी बात है। समकालीन इतिहासो को देखने से पता चलता है कि उमर खैयाम के समय मे बहुत से लोग शराब पीते थे। अमीरो और शायरो की मजलिसो मे तो शराब के दौर खास तौर पर चलते थे। नदवी साहब ने स्वय लिखा है—

"खैयाम के कमसिन मुआसिर (समकालीन) हकीम सनाई के एक बयान से मालूम होता है कि उनके ज़माने मे शराबनोशी (मदिरापान) गोया हकीम व फिलसफी होने की सनद थी। सनाई ने खुरासान के काज़ी ....की मदह (प्रशसा) मे जो तरकीब बन्द लिखा है उसमे काज़ी उल्कज्ज़ाते खुरासान (खुरासान के सब से बडे काजी) के मुँह से यह कहलवाया है कि 'ऐ सनाई, तुम हकीम भी नही; अगर हकीम होते तो शराब पीते।' सनाई जवाब मे कहते है कि अगर मै मस्ते शराब हो कर हिकमत पाऊँ तो बेअक्ल गदहा क्यो न बन जाऊँ।"

जब यह हालत थी तो हकीम खैयाम जो कि बराबर अमीरो और बादशाहो की मजलिसो मे शामिल होते थे शराब पीने से न बचे होगे। निजामी अरूज़ी ने जिस "मज-लिसे इशरत" का बयान किया है उसकी इशरत मे भी शराब का रङ्ग साफ़ नजर आता है।

रुबाइयों का अनुवाद

हिन्दी भाषा-भाषी शिक्षित-समाज उमर ख़ैयाम की रुबाइयो का प्रथम परिचय अधिकतर फिट्ज़-जेराल्ड् (Fitzgerald) के अग्रेजी अनुवाद से पाते है। और अबतक जितने अनुवाद हिन्दी के मासिक पत्रो या पुस्तकरूप मे प्रकाशित हुए है वे सभी इसी अग्रेजी अनुवाद पर आधारित है। केशव पाठक की रुबाइयाँ और "बच्चन" की "खैयाम की मधुशाला" फिट्ज-जेराल्ड् के प्रथम सस्करण के अनुवाद है और प० बल्देव प्रसाद मिश्र का "मादक प्याला" उसके चौथे सस्करण का। मिश्र जी ने कुछ उन रुबाइयो का भी अनुवाद किया है जिनका फिट्ज़-जेराल्ड् के अनुवाद से कोई सम्पर्क नही। अन्य भाषाओ मे से श्रीयुक्त कान्तिचन्द्रघोष-कृत बङ्गला अनुवाद भी फिट्ज़-जेराल्ड् के प्रथम सस्करण का उल्था है। हाँ, उर्दू मे उमर खैयाम की मूल रुबाइयो का अनुवाद हमने देखा है, परन्तु यह बहुत अच्छा नही। न तो इसमे फारसी भाषा का प्राकृतिक पद-लालित्य है और न मूल रुबाइयो का प्रसाद गुण।

फिट्ज़-जेराल्ड् की 'रुबाइयो' को अनुवाद कहना भाषा के साथ बलात्कार करना है। उन्होने खैयाम के भावो को लेकर नये सिरे से कविता की है, या यो कहिए कि मूल रुबाइयो मे जो रङ्ग-बिरङ्गे और छोटे-बडे रत्न थे उन्हे चुन कर कला-कुशल जडिया की भाँति जड कर ऐसा अमूल्य

आभूषण तैयार किया है कि जिसको पहिन कर कविता-कामिनी फूली नही समाती। बहुत से रत्न ज्यो के त्यो रखे है, बहुत से विरूप और कदाकार हीरो को तराश कर अपूर्व सौन्दर्य और चमत्कार की सृष्टि की है, यही नही, कही कही तो नये भाव लेकर अपनी ओर से जोड दिये है और बहुत से स्थानो मे इतना रूपान्तर कर दिया है कि मूल भाव पहिचाने नही जाते। किसी कवि की कविता के साथ ऐसा स्वेच्छाचार करना कहाँ तक क्षम्य है, इसके विचार करने की यहाँ पर अधिक आवश्यकता नही है। कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर इन रुबाइयो के बङ्गला अनुवाद के विषय मे लिखते है—

এ রকম কবিতা এক ভাষা থেকে অন্য ভাষার ছাঁচে ঢেলে দেওয়া কঠিন। কারণ এর প্রধান জিনিষটা বস্তু নয়, গতি। ফিট্জ্-জেরাল্ডও তাই ঠিকমত তর্জ্জমা করেন নি—মূলের ভাবটা নিয়ে সেটাকে নূতন করে সৃষ্টি করেছেন। ভাল কবিতামাত্রকেই তর্জ্জমায় নূতন করে সৃষ্টি করা দরকার।

ऐसी कविता को एक भाषा से लेकर दूसरी भाषा के ढाँचे मे ढाल देना कठिन है। क्योकि इस कविता का प्रधान गुण "वस्तु" नही "गति" है। फिट्ज्-जेराल्ड् ने भी इसीलिए ठीक ठीक तर्जुमा नही किया, मूल के भावो को लेकर उनकी नये तौर पर सृष्टि की है। अच्छी कविता मात्र की तर्जुमा मे नये तौर पर सृष्टि करना आवश्यक है।

और फिट्ज्-जेराल्ड् की प्रणाली के औचित्य का सब से बडा प्रमाण उनके अनुवाद की सफलता है।

जो सलूक फिट्ज्-जेराल्ड् ने उमर ख़ैयाम के साथ किया है, वही सलूक हमने फिट्ज्-जेराल्ड् के साथ करने का प्रयत्न किया है। उनके चौपदो को तोड-मरोड़ कर नये सिरे से सृष्टि करने का बीडा उठाया है, और फिट्ज-जेराल्ड् की तरह "मुक्तक" काव्य का रूप रखते हुए भी, प्रबन्धात्मक रूप को भुलाया नही है। जहाँ तक हो सका है उमर ख़ैयाम के मूल भावो को प्रधानता दी है, और कुछ ऐसी रुबाइयाँ भी जोड दी है जो फिट्ज-जेराल्ड् के अनुवाद से सम्बन्ध नही रखती। हमे कहाँ तक सफलता मिली है, इसका न्याय हमारे ऊपर नही, पाठको के ऊपर है। "निज कवित्त केहि लाग न नीका"। परन्तु हम अपनी त्रुटियो को भली भाँति जानते है। खडीबोली के पण्डितो को तो हमारी भाषा कई स्थानो मे खटकेगी। "फिर" के स्थान मे "फेर"; "जहाँ" के स्थान मे "जँह", और "नित", "बहु", "सँग" इत्यादि शब्दो के प्रयोग पर वे अवश्य अप्रसन्न होगे। पिङ्गल की कसौटी पर भी हमारे सब छन्द एक से नही उतरेगे। अपनी अयोग्यता के अतिरिक्त हम इन त्रुटियो का क्या जवाब दे? किन्तु सम्भव है कि हिन्दी भाषा के वे हितैषी, जो सूर, तुलसी, कबीर और देव की स्वच्छन्द-गामिनी भाषा

को व्यर्थ-नियमो मे जकडी हुई और कवि की सुधावर्षिणी जिह्वा से उतर कर विद्यार्थियो के कोषो और कुञ्जियो मे पडी हुई नही देखा चाहते, सम्भव है वे हमारी उच्छृङ्खलता पर प्रसन्न भी हो।

पाठक यह न भूले कि हमने फिट्ज-जेराल्ड के खैयाम की रुबाइयो का "अनुवाद" किया है, और मूल खैयाम चाहे 'सूफी' हो या 'शराबी' फिट्ज्-जेराल्ड् उनको शराबी ही समझते थे। उमर के सिद्धान्तो को उन्होने "The original irreligion of thinking men" अर्थात् "विचारशील मनुष्यो की स्वाभाविक धर्महीनता" बताया है और अन्त मे लिखा है—

"However, as there is some traditional presumption and certainly the opinion of some learned men, in favour of Omar's being a Sūfi . . . those who please may so interpret his wine and cup-bearer. . . . . Other readers may be content to believe with me that while the wine Omar celebrates is simply the juice of the grape, he bragged more than he drank of it. . . . . "

अर्थात्

"परन्तु, क्योकि लोक-भावना थोडी बहुत उमर के सूफी होने के पक्ष मे है और निस्सन्देह कई विद्वान उमर को सूफी ही समझते है, जो पाठक चाहे उमर के 'प्याले' और 'साकी' को सूफियो का 'प्याला' और 'साकी' समझ ले। . अन्य पाठक मेरी इस धारणा से सन्तुष्ट रहे कि उमर ने जिस मदिरा का अभिनन्दन किया है वह केवल अङ्गूर का रस ही है, उमर उसको पीता कम था, बखानता अधिक था . ।" जो पाठक फिट्ज-जेराल्ड् के चौपदो मे आध्यात्मिक मदिरा का पान करते हो, वे निस्सन्देह हमारे अनुवाद मे भी आध्यात्मिक मदिरा से वचित नही रहेगे।

रुबाइयों की लोकप्रियता

उमर के निजी सिद्धान्तो को जाने दीजिए। यह बात विचारने योग्य है कि उनकी रुबाइयाँ और विशेष कर फिट्ज़-जेराल्ड् का अनुवाद इतना लोकप्रिय क्यो है ? आजकल विज्ञान का युग है और प्रयोगात्मक विद्याओ का आदर है। जो बात तर्क की कसौटी पर सच्ची उतरती है उसी को हम बहुमूल्य समझते है; जो बुद्धिगोचर और इन्द्रियगोचर होता है उसीका अस्तित्व स्वीकार करते है। भक्ति को अन्धविश्वास कह कर ठुकराते है और श्रद्धा को मूर्खता समझते है। परन्तु, पारलौकिक विषयो के चिन्तन मे तर्कमात्र कभी

सफल नही हो सकता। अध्यात्म शास्त्र का सिद्धान्त है—

अचिन्त्याः खलु ये भावाः न तास्तर्केण साधयेत्।

भक्ति, श्रद्धा और विश्वास का होना आवश्यक है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी बुद्धिमार्ग की कठिनाइयो को दुर्निवार समझ कर भक्ति का उपदेश दिया है और कहा है कि बुद्धिमार्ग द्वारा प्राप्त हुए ज्ञान को स्थिर रखने के लिए भी "भक्ति" की आवश्यकता है—

"ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका,
साधन कठिन न मन कहुँ टेका।
करत कष्ट बहु पावै कोऊ,
भगति हीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ।"

* * *

"तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई,
रहि न सकै हरि भगति बिहाई।"

फल यह होता है कि 'तर्क' का अडियल टट्टू शास्त्रो और महात्माओ के बताए हुए सन्मार्ग पर चलने से हटता तो है, परन्तु दूसरा सुगम मार्ग ढूँढने मे असमर्थ होता है। यह और बात है कि इधर उधर धक्के खाकर, मानसिक व्यथा अथवा अन्य किसी प्रकार की ईश्वरीय प्रेरणा का कोडा खाकर, वह अन्त मे तर्क-हठ को छोड़ दे और जिस 'भक्ति' को अन्धविश्वास समझता था उसी को अङ्गीकार कर ले, परन्तु प्रारम्भ में

छटपटाता अवश्य है। कुछ अभागे 'बुद्धिमन्त' जीवन-पर्यन्त छटपटाते रहते है—

ज्यो ज्यो सुरझि भज्यौ चहत, त्यो त्यों उरझत जात।

'बुद्धि' के इस दुरन्त आग्रह की ओर इकबाल ने यो इशारा किया है—

अच्छा है दिल के साथ रहे पासबाने अक़्ल,
लेकिन कभी कभी उसे तनहा भी छोड़ दे।

पाठकगण ! ये रुबाइयाँ इन्ही 'अक्ल' के मारे 'अक्लमन्दो' की आहे है। ससार स्वप्न है, जीवन क्षण-भङ्गुर है। कहाँ से आये है, कहाँ जायेगे—कौन जानता है ? जितने ज्ञानी और पण्डित हो चुके है, क्या उनकी विद्या और पाण्डित्य से कुछ लाभ हुआ है ? जिसको जो सूझता है, बक जाता है—'सत्य' का पता किसी को नही। कैसे कैसे पुरुषार्थी और बली हो चुके है, उनका पुरुषार्थ और बल किस काम आया ? युगो से मनुष्य सर पटक रहा है परन्तु प्रकृति के अटल नियमो मे कुछ अन्तर नही पडा। "सुबह होती है शाम होती है, उम्र यो ही तमाम होती है।" क्या धनी, क्या निर्धनी, क्या पापी और क्या पुजारी, क्या सभी एक ही रास्ते नही जाते ? फिर स्वर्ग और नरक, पाप और पुण्य के पचडे मे क्या रखा है ?

बीत गये युग पोथी पढ़ते करते "अस्ति" "नास्ति" की खोज
जीवन की यह विषम पहेली कोई किन्तु न पाया बूझ।

तो क्या मेरे-तुम्हारे प्रयत्न से यह पहेली बूझ जायगी ? नही। फिर चिन्ता करने से क्या लाभ ? केवल जो है, सो है, इसे अङ्गीकार करो। कौन ? कहाँ ? क्यो ? कैसे ? के झझट मे मत पडो।

जब ये विचार सहसा सामने आते है तो प्रत्येक "विचार-शील" मनुष्य फडक उठता है, क्योकि उसकी अन्तरात्मा मे इन्ही विचारो की प्रतिध्वनि सुनाई देती है। यही, फिट्ज-जेराल्ड के शब्दो मे, विचारशील मनुष्यो की स्वाभाविक धर्म-हीनता है, यही इन रुबाइयो की लोकप्रियता का कारण है।

अब रही मदिरा। इन रुबाइयो की हृदय-ग्राहकता के लिए मदिरा अनिवार्य नही, विना मदिरा के भी ये लोक-प्रिय होती। परन्तु मदिरा ने 'सोने मे सुगन्ध' का काम किया है।

गीता मे भगवान् ने कहा है—

अज्ञश्च, अश्रद्धानश्च, सशयात्मा विनश्यति
नायं लोकोस्ति न परो न सुखं सशयात्मनः

(अ० ४, श्लोक ४०)

"जिसको 'ज्ञान' नही, जिसमे 'श्रद्धा' नही, जो सशयात्मा है; उसका नाश हो जाता है। सशयग्रस्त को न यह लोक है और न परलोक, और न सुख ही है।"

ख़ैयाम इन्ही अभागे सशयात्माओ मे से एक थे। वैज्ञानिक थे, गणितज्ञ थे। गणित के सिद्धान्तो से अध्यात्म का साधन करना चाहते थे। पैमाना और परकाल लेकर 'शून्य' की माप करने चले थे। फल वही हुआ जो होना था।

चढकर बुद्धियान पर मैंने देखा सभी गगन-पाताल
ज्ञान-सिधु में पैठ निकाले अति अमूल्य रत्नो के जाल
जीवन के इस जटिल जाल की, सुलझाई औ' ग्रन्थि असंख्य
किन्तु न सुलझा पाया प्रियतम, कुटिल काल की ग्रन्थि कराल।

फिर क्या करते?

कुटिल काल की ग्रन्थि न सुलझी मिला न जीवन में कुछ सार,
अन्धी बुद्धि ज्ञान-दीपक ले ढूँढ़ फिरी सारा ससार।
मन की प्यास बुझाने को तब, पाने को सुख दुख का भेद
शरण गही, प्रियतम, मैंने इस मिट्टी के प्याले की हार।

एक जगह अपने मदिरा-पान का दोष-निवारण यो करते है—

वैर न मुझे धर्म से है कुछ, न कुछ विशेष पाप से प्रीति
न कुछ बुरी ही लगती मुझको, प्रिय, बेबात लोक की रीति।
मैं जो प्याले पर मरता हूँ सो बस इसी लिए 'ख़ैयाम'
एक घडी को बिसर जाय यह नियति चक्र की निर्मम नीति।

ख़ैयाम के निराशावाद को ध्यानपूर्वक देखा जाय तो भगवान् के उपरोक्त वाक्य का पूर्ण समर्थन हो जाता है।

जो ज्ञानी हैं, जिनमे श्रद्धा है, जो 'प्रेम-सुरा' का रसास्वादन कर चुके है, उनको ये रुबाइयाँ अपनी पुण्य भावना मे और भी दृढ करेगी। रहे उमर, और उमर जैसे सशयात्मा—हम को पूर्ण विश्वास है कि ईश्वर की असीम अनुकम्पा मे उनको भी अवश्य स्थान मिलेगा—

"पारसाओ में चला ज़ाहिद जो उसको ढूँढ़ने,
मगफरत बोली, 'इधर आयें, गुनहगारो मे हूँ'।"

रुबाइयाँ

१

जागो मित्र! भरो प्याला, लो, देखो वह सूरज की कोर
राजअटारी पर चढती है फेक अरुण किरणो की डोर।
नभ के प्याले मे दिनकर को माणिक-सुधा ढालते देख
कलियाँ अधरपुटो को खोले ललक रही है उसकी ओर।

२

पौ फटते ही मधुशाला मे, गूँजा शब्द निराला एक,
मधुबाला से हँस हँस कर यो कहता था मतवाला एक—
"स्वाँग बहुत है रात रही पर थोडी, ढालो, ढालो शीघ्र
जीवन ढल जाने के पहिले ढालो मधु का प्याला एक।"

३

और कान मे भनक पडी जब ऊँघा मै पी कर दो चार
कोई कहता था पुकार कर, "मधुशाला का खोलो द्वार,
केवल चार घडी रहना है हम को, क्यो करते हो देर?
एक बार के गये हुए फिर, लौटेगे न दूसरी बार।"

४

लो फिर आई है वसन्त ऋतु, हरी हुई फिर मन की आस
व्यथित हृदय कहता है चल कर करे कही एकान्त-निवास—
जहाँ लता-तरुओ के पत्ते हिलते ज्यो मूसा का हाथ
और सुगन्ध सुमन-माला की उठती ज्यो ईसा का श्वास।

५

देखो आज खिले है सुख से लाखो मधु-कलियो के गात—
किन्तु कहो तो कल इन मे से कितने फेर खिलेगे तात ?
बूँद-बूँद टपका जाता, हा ! जीवन का मधु-रस, ख़ैयाम;
एक एक कर झडे जा रहे पक पक कर जीवन के पात।

६

कैकोबाद, कैख़ुसरो, दारा, रुस्तम और सिकन्दर वीर—
क्या जाने अब कहाँ छिपे वे बडे बडे योद्धा रणधीर ?
किन्तु आज भी विमल वारुणी मे जगती माणिक की ज्योति,
और चित्त को चञ्चल करता अब भी वन का स्निग्ध समीर।

७

अब भी, झुकी लदी गुच्छो से, अङ्गूरो की डाली देख—
फूली, छकी, ओस की धोई नव गुलाब की प्याली देख—
भूली, अभी-अधखिली कलियो की चितवन की लाली देख
"पीओ, पीओ" कहती फिरती है बुलबुल मतवाली, देख।

८

ला, ला, साकी! और, और ला, फिर प्याले पर प्याला ढाल;
धर रख, गूढ-ज्ञान-गाथा को, व्रत-विवेक चूल्हे मे डाल।
सिखला रहा 'त्याग' की पट्टी, कैसा ज्ञानी है तू मित्र!—
नही सूझता क्या तुझको यह यौवन, यह मधु, यह मधुकाल?

९

यों तो मै भी नित्य सोचता हूँ अब खाऊँगा सौगन्ध—
इस प्याले का मोह तजूँगा, पीना कर दूँगा अब बन्द।
किन्तु आज तो प्रकृति-प्रिया है आई सज फूलो का साज
आज वसन्तोत्सव है प्रियतम, आज न पीऊँ तो सौगन्ध!

१०

आज वसन्तोत्सव है प्रियतम! फूलो मे फूटा रसराज
मन की कसर निकालूँगा सब, तजकर लोक-लीक की लाज—
पहिला प्याला पी, कर दूँगा बाँझ बुद्धि बुढिया का त्याग
चढा दूसरा, वरण करूँगा, वरुण-नन्दिनी को फिर आज!

११

नित्य रहेगा नही यहाँ, प्रिय, जीवन का यह डेरा कुछ;
प्राण-बटोही उठ जायेंगे करके रैन-बसेरा कुछ।
यहाँ पडे सोते हो जब तक करते हो "तेरा"-"मेरा"
जीवन-स्वप्न टूट जाने पर, "मेरा" रहे न "तेरा" कुछ।

१२

हम ही जब न रहे तो क्या फिर बलख-बुखारा, क्या बगदाद ?
प्याला ही जब ढुलक गया तो क्या खट्टा, क्या मीठा स्वाद ?
खाओ, पीओ, मौज करो—दिन दो के जीवन मे खैयाम
भला बुरा क्या, क्या सुख-दुख, औ' पाप-पुण्य की क्या बुनियाद?

१३

प्रियतम ! आओ हम तुम दोनो, पाप-पुण्य की चर्चा छोड,
विजन-विपिन मे चलो चल बसे इस झझट से नाता तोड—
राजा-रङ्क, धनी-निर्धन की जहाँ न कोई करता पूछ,
और तृणासन कर लेता है जहाँ सुवर्णासन की होड ।

१४

दो मधूकरी हो खाने को, मदिरा हो मनमानी जो,
पास धरी हो मर्म-काव्य की पुस्तक फटी-पुरानी जो,
बैठ समीप तान छेडे, प्रिय, तेरी वीणा-वाणी जो,
तो इस विजन-विपिन पर वारूँ, मिले स्वर्ग सुखदानी जो ।

१५

कोई स्वर्ग-लोक के सुख को कहता है अतोल, अनमोल,
कोई राजपाट के ऊपर करता है मन डाँवाडोल;
गाँठ बाँध ले मूर्ख नकद के नौ, तेरह उधार के छोड—
यो तो लगते हैं सुहावने सबको सदा दूर के ढोल।

१६

गाँठ बाँध ले मूर्ख नकद के, 'फिर' की आशा पर मत भूल,
सुन तो सही कह रहा है क्या हँस हँस कर गुलाब का फूल—
"जो सु-वर्ण लाता हूँ जग मे चलने से पहिले ही, मित्र !
उपवन मे बखेर जाता हूँ, रत्ती-रत्ती झाड दुकूल।"

१७

हा ! मिट्टी मे मिल जाती है आशा सभी हमारी, तात।
कभी खिली भी तो बस जैसे दो दिन की उजियारी, तात।
हीरा-मोती-लाल, धरा-धन-धाम-सम्पदा जितनी, हाय।
क्षणिक मरुस्थल के तुषार सी उड जाती है सारी, तात।

१८

और, मरुस्थल यह जीवन है, लेना सतर्कता से काम,
काल-कज़ाक प्राण हरने की घात लगाता आठो याम।
सुख का प्यासा मृग-अबोध-मन, रखना इसको खूब सँभाल,
स्वर्ग-नरक की मृग-तृष्णा मे बहक न कही जाय खैयाम।

१९

स्वर्ग ? स्वर्ग है सफल साधना के सुख ही का क्षणिक प्रवाह,
और नरक है केवल अपनी विफल-वासना का उर-दाह।
पापी और पुजारी, निर्धन-धनी, मूर्ख औ' ज्ञानी, हाय !
हमने तो सब ही को देखा, जाते अन्त एक ही राह।

२०

वह कङ्काल जिसे जीवन मे जुटे न दाने भी दो सेर—
राजा जो न ख़र्च कर पाया, भरे खजानो के भी ढेर—
दोनो 'माटी' मिले, किसी का बना न इतना सोना, हाय !
कोई जिसे गाड कर रख दे, और खोद कर देखे फेर ।

२१

इस टूटी-फूटी सराय मे जिसको कहते है ससार;
जन्म मृत्यु दोनो है जिसके, आने-जाने के दो द्वार,
कैसे कैसे बली ठाठ से ठहरे यहाँ, अन्त मे किन्तु,
कूच कर गये बजा बजा कर अपनी नौबत दिन दो-चार।

२२

जा कर देख गगन-चुम्बी वे गये राज-प्रासाद कहाँ,
रहते बडे बडे नामी, जमशेद जहाँ, बहराम जहाँ,
उल्लू बोल रहे है उनमे कही, कही उडती है धूल
भग्न कँगूरो पर कौवे अब, चिल्लाते है, "क-आँ ?", "क-हाँ ?"

२३

फूलो से तुलती थी नित-प्रति जो वराङ्गनाएँ सुकुमार,
दुर्भर था जिनको सँभालना अपनी शोभा ही का भार;
और लाड के लाले-पाले उनके प्रेमी राजकुमार,
हाय ! फूल की सेजो पर ही करते थे जो नित्य विहार—

२४

वे ही कठिन भूमि-शय्या पर आज धूल की चादर ओढ
सोये है चिर-निद्रा मे, प्रिय, जग के सुख-दुख से मुख मोड।
पशुओ की ठोकर खाकर भी नही टूटती उनकी नीद।
हाय ! क्रूर-कण्टक निकले है उनके मृदु अङ्गो को फ़ोड।

२५

जहाँ जहाँ पर गिरा चुके है, अपना उष्ण रक्त भूपाल,
मेरे जाने वही वही पर उगते है प्रसून ये लाल।
और खिले इस क्यारी मे जो चम्पक के ये मनहर फूल
इनकी जड मे निश्चय होगे किसी सुमुखि के गोरे गाल।

२६

नदी किनारे उगती औ' जो हरी हरी मखमल-सी दूब;
हम तुम जिस पर चलते है, प्रिय!—चलना इसे बचाकर खूब।
सम्भव है यह कभी रही हो किसी युवक-आनन की रेख;
सम्भव है इसने भी लूटा हो सुख अधर-सुधा मे डूब।

२७

सम्भव है सो होने दो, लो भर लाओ यह प्याला, तात !
बुझ जाये जो अगले-पिछले भय-सशय की ज्वाला, तात !
कल का कौन भरोसा ? कल को मैं भी मत पहुँचूँ उस पार—
सात हज़ार वर्ष से जग को जहाँ काल ने डाला, तात !

२८

अपने सङ्गी-स्नेही जो थे, प्रियतम, आज सभी देखो न ?
एक एक जीवन का मधुरस पी पी कर सोये हैं मौन।
और आज उनकी मिट्टी पर हम-तुम जो करते है खेल
हाय ! हमारी मिट्टी पर कल क्या जाने खेलेगा कौन ?

२९

हाथ लगे सो मौज लूट लो, प्रियतम, यौवन मे दिन तीन,
हाय ! अन्त मे तो होना है सबही को अनन्त मे लीन।
हाय ! अन्त मे तो क्या जाने कहाँ पडे होगे ख़ैयाम—
सुरा-हीन, सङ्गीत-हीन, सङ्गिनी-हीन औ' अन्त-विहीन ?

३०

जो मन्दिर-मसजिद मे करते सगुण-निगुण का अनुसन्धान,
और मकतबो मे पढ़ते जो रीति-नीति का पूरा ज्ञान—
दोनो ही को सम्बोधित कर, मित्र ! निराशा-निशि का दूत
कहता है, "क्यो भटक रहे हो मिथ्या-पथ मे ओ नादान ?"

३१

जन्म-मरण के रुद्ध द्वार पर, गये न कितने ज्ञानी जूझ
खोल न पाये लाख यत्न कर, चली न एक किसी की सूझ।
बीत गये युग "पोथी" पढते करते "अस्ति-नास्ति" की खोज
जीवन की यह विषम पहेली कोई किन्तु न पाया बूझ।

३२

बडे बडे विज्ञान-विशारद, वेदान्ती औ' शास्त्र-समर्थ,
एक एक पद के करते थे बीस बीस जो अद्भुत अर्थ—
काल बली का धक्का खाकर हवा हो गया उनका ज्ञान
पडे खेह खाते है देखो, खो कर यौवन के दिन व्यर्थ।

३३

खोओ मत यौवन के दिन, प्रिय! आओ, लो पी लो दो घूँट
निश्चय तो बस एक बात है—पल में प्राण जायँगे छूट।
निश्चय तो बस एक बात है, है बाकी सब झंझट झूठ—
मुरझा जाती कली सदा को एक बार जो जाती फूट।

३४

कब तक, कब तक, मित्र! फिरोगे जिस-तिस की चिन्ता में व्यस्त?
कब तक, कब तक, और रहोगे, दीन और दुनिया में ग्रस्त?
आओ, लो, प्याला भर दो फिर, दो दिन खुल खेलो खैयाम
सुख-दुख का शशि तो योंही, प्रिय, होगा नित्य उदय औ' अस्त।

३५

देता दोष भाग्य को बैठा जो उदास हो आठो याम
उसको देख देख कर दुनिया लज्जित होती है ख़ैयाम।
है धिक्कार हृदय को जिसमे उठी न कभी प्रेम की पीर,
औ' धिक् है वे अधर जिन्होने चखी न यह मदिरा रस-धाम।

३६

"अस्ति" "नास्ति" के अन्तर का है, यो तो मुझको भी कुछ ज्ञान
और सहज ही कर सकता हूँ "ऊँच-नीच" की भी पहिचान।
किन्तु सत्य तो यह है मैंने सब विद्याओ मे से एक
आठो अङ्ग डूब कर देखी है तो यह मदिरा रस-खान।

३७

यह मदिरा रस-खान, मुदमयी, विश्व-मोहिनी, मङ्गल-मूल।
सञ्जीवन-बूटी हरती जो क्षण मे जीवन के सब शूल।
जिसके मन्दिर मे धँसते ही सब मत-सम्प्रदाय "ख़ैयाम"
हो जाते है एक, भूल कर अपने भेद-भाव निर्मूल।

३८

धुल कर बह जाता है जिसमे झूठा जग का माया-मोह,
मिटते जिसके एक घूँट मे आपस के विवाद-विद्रोह।
पुण्यमयी पारसमणि मदिरा, जिसके स्पर्श-मात्र से, मित्र!
अति अनमोल स्वर्ण बन जाता यह खोटा जीवन का लोह।

३९

हाँ, नव-यौवन की उमङ्ग मे, मैने मित्र! अनेको बार
छानी धूल बहुत पन्थो की, देखे बहु गुणियो के द्वार,
कूट-तर्क की भूल-भुलैयो मे औ' भटका बहुत परन्तु—
भेद न मिला, घुसा जिससे था उसी द्वार से लौटा हार।

४०

चतुरो के सँग बैठ बैठ कर बोये बहुत ज्ञान के बीज
अपने हाथो से सीचा औ' उनको बहुत पसीज पसीज।
जीवन भर के घोर परिश्रम का फल मिला यही बस अन्त
"आया था जल की हिलोर सा, चला पवन सा क्षण मे छीज।"

४१

क्या जाने किस दूर-देश से, क्यो, किस की इच्छा से, हाय !
आया था जल की हिलोर सा, जग मे निरुद्देश, निरुपाय ?
अन्त पवन का झूका-सा औ', छूट चला जग से ख़ैयाम
क्या जाने किस दूर-देश को, असफल, अर्थशून्य, असहाय ?

४२

मेरी अनुमति लिये विना ही दिया जगत मे मुझको ठेल,
और अवश्य विना पूछे ही देगा जग से अन्त ढकेल।
धोना है इस घोर निरादर के धब्बो का मन से मैल
प्याले पर प्याला भर दो, प्रिय, धरो पात्र पर पात्र उडेल।

४३

बुद्धि-यान पर चढकर मैंने देखा सभी गगन-पाताल
ज्ञान-सिन्धु में पैठ निकाले, अति अमोल रत्नो के जाल
जीवन के इस जटिल जाल की सुलझाई औ' ग्रन्थि असख्य
किन्तु न सुलझा पाया, प्रियतम, कुटिल काल की ग्रन्थि कराल।

४४

कुटिल काल की ग्रन्थि न सुलझी, मिला न जीवन मे कुछ सार;
अन्धी बुद्धि ज्ञान-दीपक ले ढूँढ फिरी सारा ससार,
मन की प्यास बुझाने को तब, पाने को सुख-दुख का भेद,
शरण गही, प्रियतम, मैंने इस मिट्टी के प्याले की हार।

४५

औ' यह मिट्टी का प्याला भी होगा कभी स-जीव, स-काम,
क्योंकि अधर से अधर मिला कर, दे कर प्रेम-सुधा रस-धाम,
अस्फुट, भेद-भरे शब्दो मे बोला, "ले, अवसर मत चूक,
एक बार जो गया यहाँ से लौटा फिर न कभी 'ख़ैयाम' !"

४६

लो प्याला भर भर दो फिर फिर, फिर फिर कहने का क्या फल?
हाथो से निकला जाता है लाख लाख का इक इक पल।
बीत चुका जो 'कल' होना था, क्या जाने होगा क्या 'कल'
आज चैन से कटती है तो 'कल' के हित क्यो हो बेकल ?

४७

'आज' चैन से कटती है तो 'कल' के ऊपर डालो धूल,
लौकिक-परलौकिक के झूठे झझट मे उलझो मत भूल।
जीवन की अमूल्य घडियाँ ये, इनको मत जाने दो व्यर्थ—
बैठ प्रणयिनी के सग दो दिन पी लो प्रेम-सुरा सुख-मूल।

४८

औ' यदि मोद-मयी मदिरा यह, और प्रिया के नयन अजान
नश्वर है तो सही, —जगत मे है नश्वरता-मात्र प्रमाण।
तो फिर जब तक बने, चैन से रस लूटो, औ' जब यमदूत
अन्तिम विष का प्याला लावे, हँस हँस कर कर लेना पान।

४९

प्रियतम ! जब तक बने चैन से रस लूटो, देखो दे ध्यान—
यह विचित्र ससार-चक्र है केवल छाया-दीप समान।
सूर्य-दीप जलता है इसमे, हम तुम इसके चारो ओर
कल्पित छाया-चित्र-तुल्य सब, चक्कर खाते है हैरान।

५०

हम तुम तो गोटे है केवल, है शतरञ्ज जगत का खेल
रात-दिवस दोनो है इसके, काले-पीले घर दो-मेल।
इधर-उधर कुछ चाल चला कर काल खिलाडी लेता मार
औ' अनन्त की अगम पिटारी मे धर देता अन्त सकेल।

५१

और भाग्य की चोटे खाकर करना मत अपलाप-विलाप
दाये-बाये जिधर चलावे, कन्दुक-सम जाना चुपचाप।
इस चौगान-भूमि मे तुझको, डाला है जिसने खैयाम,
आप जानता है वह सब कुछ, आप जानता है, वह आप।

५२

यह मत सोच कि एक बार जो, जायेगा तू जग को छोड
पैदा होगा नही जगत् मे तो फिर कोई तेरा जोड।
नित्य ढालता है साकी ज्यो प्याले मे बुद्बुदे असंख्य
त्यो नित नियति ढालती रहती तेरे से ख़ैयाम करोड।

५३

जिस दिन प्रथम दिशा प्राची मे उगा अरुण किरणो का जाल—
जिस दिन से प्रारम्भ हुई यह, शशि औ' ताराओ की चाल—
उसी, उसी दिन विधि की निर्मम, निडर लेखनी ने खैयाम
है लिख कर रख दिया सृष्टि के अन्तिम दिन तक का सब हाल।

५४

अब चाहे खा, पी, ख़ुश हो ले, चाहे व्रत-उपास कर देख
चाहे चुपके सुख दुख सह ले, चाहे छाँट मीन औ' मेख,
चाहे आँसू बहा बहा कर भर दे सौ समुद्र खैयाम
एक बार के लिखे हुए पर मिटते नही भाग्य के लेख।

५५

हाँ, इस क्रूर चक्र के आगे चलता है कोई न उपाय
अन्त भाग्य के हाथो ही मे, रहता हार-जीत का न्याय
कौन, कहाँ से, क्यो आया था? जाना कहाँ, और क्यो, अन्त?
प्रश्न जानता हूँ मै भी सब, उत्तर कौन बतावे हाय?

५६

और अधोमुख पान-पात्र यह कहते है जिसको आकाश—
जिसके नीचे मुँदे हुए हम, जीते है, पाते है नाश,
इसकी ओर हाथ फैला कर मत, मत माँग क्षमा की भीख
यह तो आप नियति का मारा, भ्रमता है निरुपाय, निराश।

५७

पहिले तो निर्णीत किया यह मेरा जीवन-मार्ग कराल,
बिछा दिये फिर स्वय उसीमे पद पद पर विष-कण्टक-जाल,
आज फँस गया हूँ उनमे मैं, तो इसमे मेरा क्या दोष ?
खरा सुवर्ण चुकाऊँ कैसे, पाया है जब खोटा माल ?

५८

और सुनो लो, एक दिवस मैं पहुँचा इक कुम्हार के द्वार
वहाँ धरे देखे मैने, प्रिय, भाँति भाँति के भाण्ड अपार
थोडे से तो उन मे से थे मूक और चेतना-विहीन
थोडे एक जगह पर बैठे करते थे कुछ तर्क-विचार

५६

एक कह रहा था, "अच्छा जब, ले कर दो मुट्ठी भर धूल
अपने कला-कुशल हाथो से, अपनी इच्छा के अनुकूल—
मेरी सुन्दर मूर्ति रची यह, तो क्या बस इस लिए कि अन्त
टूट-फूट कर यह ज्यो की त्यो, फिर हो जाय धूल की धूल ?"

६०

बोला एक, "नही, कभी नही, सृजन-सहरण यह अविराम
व्यर्थ नही हो सकता, इसका बुरा नही होगा परिणाम।
मित्रो! जिससे स्नेह-पूर्वक पी कर सदा बुझाते प्यास
नही तोडते है पागल भी बे-मतलब वह पात्र ललाम।"

६१

बोल उठा इतने मे सहसा, रूप-हीन इक पात्र सरोष,
"मेरा रूप विरूप बना यह, क्यो कर ? कुम्भकार के दोष ?
अपने ही कर से उसने जब, सब को किया गुणागुण दान
तो क्यो एक नरक भोगेगा और दूसरा सुख-सन्तोष ?"

६२

यह सुन चुप हो रहे सभी तब, एक पात्र ने कहा पुकार,
"मेरी मिट्टी सूख गई है, पडी पडी विस्मृति के द्वार
मदिरा-सुधा चिर-प्रिया मेरी—पाऊँ जो उसकी दो बूँद
तो सम्भव है फिर हो जाये मुझ मे नव-जीवन सञ्चार।"

६३

हाँ, जब तक घट मे जीवन है मधु ढाले जाओ स्वच्छन्द
और अन्त मे जब चुक जाये जीवन का यह दुविधा-द्वन्द्व
द्राक्षा-रस मे स्नान करा कर, पत्र उसी के अङ्ग लपेट
मुझे दफन कर देना, प्रियतम, किसी पुष्प-वन मे सानन्द

६४

मेरी समाधिस्थ मिट्टी से निकले ऐसे मनहर फूल—
पूरे उपवन मे छा जाये ऐसी मदिर गन्ध मुद-मूल—
कट्टर सुरा-विरोधी भी जो एक बार निकले उस ओर,
तो सुख से उन्मत्त हो उठे, अपने नेम-धर्म को भूल।

६५

तुम कहते हो महा-दोष है मदिरा पापिनि को कर दूर,
इसके पीछे भोगेगा तू, अन्त नरक के कण्टक क्रूर।
यह सच है, पर उभय लोक की सुख-श्री से बढकर सौ बार
है वह एक घडी जब मदिरा पी कर हो जाता हूँ चूर।

६६

वैर न मुझे धर्म से है कुछ, न कुछ विशेष पाप से प्रीति,
न कुछ बुरी ही लगती मुझको,प्रिय, बे-बात लोक की रीति।
मैं जो प्याले पर मरता हूँ, सो बस इसी लिए खैयाम,
एक घडी को बिसर जाय यह नियति-चक्र की निर्मम नीति।

६७

यद्यपि हुई सुरा के पीछे कलुषित मेरी कीर्ति अमोल,
और लाख की साख गई बिक, दो चुल्लू पानी के मोल,
तो भी, तो भी, मुझको है इन मूर्ख कलालो पर आश्चर्य
मदिरा बेच बेच ये लेते मदिरा से बढकर क्या मोल ?

६८

लिखी पाण्डु-लिपि मे है मेरी, जो जो इस जीवन की पोल,
उन्हे खोल कर कह देना है लेना प्राण-दण्ड सिर मोल।
इन बकवादी विद्वानो मे है न एक भी इतना योग्य
जिसके सम्मुख, मित्र ! कह सकूँ अपने मन की बाते खोल।

६९

मित्र ! विचारी है क्या तुमने कहीं कभी यह अद्‌भुत बात
गला फाड कर रोता है क्यो कुक्कुट होते देख प्रभात ?
कहता, "हाय ! सुनो दिनकर की प्रथम किरण का कटु सन्देश
'जीवन की कुछ घडियो मे से, लो यह चली और इक रात ।' "

७०

हा ! बस दो दिन फूल अन्त मे अन्तर्हित होता मधुमास,
बातो-बात बीत जाता है यौवन का उल्लास-विलास।
आने पाते नही कि चलने का करना पडता सामान
समय कहाँ इतना कि बुझावे सुख से बैठ प्रेम की प्यास ?

७१

प्रियतम ! हम-तुम कर पाते जो कही नियति-नटिनी से मेल—
अपने हाथो मे होता जो जीवन का यह दुखमय खेल।
तो फिर इसे मिटा कर फिर से रचते ऐसी सृष्टि नवीन
मन की साधे पुजती जिसमे, फलती जहँ आशा की बेल।

७२

लो चन्द्रोदय हुआ आयु का बीता और एक दिन, हाय !
पूर्ण हो गया और एक लो जीवन-गाथा का अध्याय।
पात्र भरो, शशिवदन ! कि यह शशि, जाकर फिर आवेगा लौट
लौटेगा न गया अवसर पर, करना चाहे कोटि उपाय।

परिशिष्ट

छन्द नम्बर और
पक्ति नम्बर — विवरण

१—पं० १–२ **मूल ख़ैयाम—**

خورشید کمند صبح بر بام افکند
کیخسرو روز باده در جام افکند

२—पं० ४ **मूल ख़ैयाम—**

برخیز که پر کنیم پیمانه ز می
زان پیش که پر کنند پیمانهٔ ما

४—पं० ३–४ **मूसा का हाथ**—कहते है कि हज़रत मूसा बहुत काले थे। जब वे मिस्र के राजदरबार मे पहुँचे और उनसे चमत्कार दिखाने को कहा गया, तो उन्होंने अपना हाथ ऊपर को उठाया और वह बर्फ़ की तरह चमकदार और सफ़ेद हो गया। इस लिये "ज्यो मूसा का हाथ" का अर्थ है चमत्कारपूर्ण।

ईसा का श्वास—ईरानियो का विश्वास है कि हजरत ईसा मसीह अपनी मसीहाई अपने श्वास से करते थे। अतएव "ईसा का श्वास" का अर्थ है "हृदय को स्वस्थ करने वाला"।

५—पं० ३–४ मूल फिट्ज़-जेराल्ड (चतुर्थ संस्करण)—

The wine of life keeps
oozing drop by drop,
The leaves of life keep
falling one by one

मूल ख़ैयाम—

چوں برگ ز شاخ عمر ریزان گردم

६—पं० ३–४ मूल ख़ैयाम—

در موسم گل ز توبه یا رب توبه

११— मूल रुबाई कितनी सुन्दर है !

اسرار ازل را نه تو دانی و نه من
وین حرف معمّا نه تو خوانی و نه من
هست از پس پرده گفتگوئے من و تو
چوں پرده بر افتد نه تو مانی و نه من

१२—पं० १-२ मूल ख़ैयाम—

چوں می گذرد عمر چه بغداد و چه بلخ
پیمانه چوں پر شود چه شیریں و چه تلخ

१६— मूल ख़ैयाम—

دوزخ شرری ز رنج بیهودهٔ ماست
فردوس دمی ز وقت آسودهٔ ماست

और—

گر پادشهی و گر گدائے بازار
ایں هردو بیک نرخ بود آخرکار

२०—पं० ३-४ मूल ख़ैयाम—

تو زر نه اے غافل نادان که ترا
در خاک نهند و باز بیروں آیند

२२— मूल ख़ैयाम—

آں قصر که بر چرخ همی زد پهلو
بر درگهٔ او شهاں نهادندے رو
دیدم که بر کنگرهٔ او فاختهٔ
بنشسته همی گفت که کوکو ! کوکو !

२४—पं० ३-४ मूल ख़ैयाम—

خارے که بزیر پائے هر حیوانیست
زلفے صنمے و ابروئے جانانیست

३०— मूल ख़ैयाम—

قومی متفکّر اند در مذهب و دین
جمعی متحیّر اند درشک و یقین
ناگاه منادی بر آید ز مکین
کای بیخبران راه آنست و نه این

३४—पं० ४ मूल ख़ैयाम—

از سلخ بغره آید از غره بسلخ

३५—पं० १–२ मूल ख़ैयाम—

خیام زمانهٔ از کسی دارد ننگ
کو در غم ایّام نشیند دل تنگ

४३— मूल ख़ैयाम—

از جرم حضیض خاک تا اوج زحل
کردم همه مشکلات گردوں را حل
بیروں جستم ز بند هر مکر و حیل
هر بند کشاده شد مگر بند اجل

४८—पं० १–२ मूल ख़ैयाम—

چو عاقبت جهاں کار نیستی است
انگار نیستی چو هستی – خوش باش

४६—पं० २ छाया-दीप—फानूसेख़याल का मन-गढन्त नाम।

یعنی که نمودند در آیینهٔ صبح
کز عمر شبی گذشت تو بیخبری

७०—पं० ३ मूल ख़ैयाम—

هرگاه که خواهد که نشیند از پا
گیرد احلس دست که بالا پیما

७२—पं० ४ मूल ख़ैयाम—

که این یکدم عاریت درین کنج فنا
بسیار بجوئی و نه یابی دیگر

निवेदन

इस "अनुवाद" के तैयार करने मे हम को निम्नलिखित मित्रो से बहुमूल्य सहायता मिली है हम उनके अनुग्रह के आभारी है—

१—प्रोफेसर अमरनाथ झा, एम्० ए०, वाइस्-चासलर, इलाहाबाद यूनीवर्सिटी,

२—मित्रवर श्रीयुत् दीनदयालु गुप्त, एम्० ए०, लेक्चरर, लखनऊ यूनीवर्सिटी,

३—मिस्टर क्यू० ए० वदूद, एम्० ए०, पटना।

अब रह गये गुरुवर प० गोकुलचन्द्र शर्मा, एम्० ए०, धर्म-समाज इण्टरमीडिएट कालिज, अलीगढ। आपके किस किस अनुग्रह का धन्यवाद दिया जाय ? सब से पहिले आप ही ने हिन्दी-साहित्य से हमारा परिचय कराया। आप ही ने कविता करनी सिखाई। आप ही की अनुमति से इस "अनुवाद" का प्रारम्भ हुआ और आपके प्रोत्साहन और सद् परामर्श से ही यह इस अवस्था पर पहुँचा है कि पुस्तक रूप मे प्रकाशित हो। यह "अनुवाद" आपको पसन्द आये, यही हमारी आशा है, यही हमारा धन्यवाद है।

रुक्विल, शिमला
१२ जून, १९३८ ई०

रघुवंशलाल गुप्त